• कविताएं...

जिस तरह मैं भटका...

एक ऐसे समय में
मैंने तुम्हारा साथ दिया
जब समय
मेरा साथ नहीं दे रहा था
वे हो सकते हैं
उत्तेजक और अमीर
लेकिन जिस तरह मैं भटका
मिलने को तुमसे पूरी उम्र
भटक कर दिखाएं वे
एक पूरा दिन भी
एक ऐसे समय में
जब प्रेम करना
मूर्खता माना जा रहा था
और अदालतें खिलाफ में
फैसले सुना रही थीं
प्रेमिकाएं
अपने वादों से मुकर रही थीं
और प्रेमी पंखे से झूल रहे थे
मैंने प्रेम किया तुमसे
तमाम खतरों के
भीतर से गुजरते हुए

मैंने तुम्हे दिल दिया
जब तुम्हे खुद अपना दिल
संभालना मुश्किल हो रहा था
तुम्हारे सांवले रंग में
गहराती शाम का
झुटपुटा होता था हमेशा
एक रहस्य गढ़ता हुआ
मैं एक पेड़ की तरह
होता था जहां
अंधेरे में खोता हुआ
एक ऐसे समय में
ज्ब आगे बढ़ने के करतब
कौशल माने जा रहे थे
बादलों की तरह
भटकता रहा मैं
मिलने को तुमसे पूरी उम्र
भटककर दिखाएं
वे मेरी तरह
एक पूरा दिन भी।

■ रंजीत वर्मा

• कहानी/–आरके नारायण

कितनी पूर्णता

गतांक से आगे...

तुम जानना चाहते हो कि कितनी जानें गई हैं, कितने घर बह गये हैं और तूफान में कितने लोग ढेर हो गये हैं?'

'नहीं, नहीं। मैं कुछ नहीं जानना चाहता, कुछ भी नहीं। तुम लोग जाओ और इस तरह बातें मत करो,' सोम चिल्लाकर कह रहा था।

'ईश्वर ने अपनी शक्ति का जरा-सा ही प्रमाण दिया है। उसको और उतेजित मत करो। हमारी जिन्दगी तुम्हारे हाथ में है। हमें जीने दो। प्रतिमा बहुत ज्यादा पूर्ण और निर्दोष है।'

लोग चले गये लेकिन वह बैठा सोचता रहा। उनके शब्द उसे परेशान कर रहे थे। हमारी जिन्दगी तुम्हारे हाथ में है। वह जानता था, इनका अर्थ क्या है। उसकी आँखों में आँसू भर आये। मैं मूर्ति को कैसे तोड़ सकता हूँ?' दुनिया को जलने दो, मैं किसी की परवाह नहीं करता। मैं मूर्ति को छू भी नहीं सकता।'

उसने देवता के सामने रखा दीपक जलाया और सामने खड़ा होकर उसे देखने लगा। थोड़ी दूर पर आसमान फिर गरजने लगा था। फिर तूफान आ रहा है। बेचारे लोग! इस बार सब खत्म हो जायेंगे।'

उसने मूर्ति के अंगूठे को देखा और सोचने लगा, 'छेनी से इसका एक टुकड़ा निकाल दूं तो सब विनाश रुक जायेगा!'

अँगूठे की ओर देखते हुए वह सोचता रहा, 'मैं यह कैसे कर सकता हूँ।' उसके हाथ कांप रहे थे। बाहर बादलों का गर्जन बढ़ता जा रहा था। लोग उसके घर के सामने इकट्ठे हो रहे थे और उससे दया की प्रार्थना कर रहे थे।

सोम ने देवता को प्रणाम किया और बाहर निकल आया। वह सड़क के किनारे खड़ा होकर देखने लगा, जहाँ दोनों तालाब मिलकर एक हो गये थे। पूर्वी किनारे पर काले बादल घुमड़ते आ रहे थे। जब ये बादल पास आ जायेंगे तो दुनिया नष्ट होने लगेगी। 'नटराज, मैं तुम्हारी प्रतिमा नहीं तोड़ सकता, लेकिन अगर मैं अपनी बलि तुम्हें दे दूँ तो क्या इससे तुम संतुष्ट हो जाओगे...?'

उसने आँखें बंद कर लीं और तालाब में कूदने का विचार करने लगा। फिर एक क्षण रुका और बोला, 'मरने से पहले अपनी बनाई मूर्ति पर एक नजर डाल लूँ। गरजते तूफान के बीच से वह घर की ओर लौटने लगा। हवा चीख रही थी, पेड़-पौधे काँप रहे थे। मनुष्य और पशु तेजी से चारों तरफ भाग रहे थे।

वह घर पहुंचा तो देखा, एक पेड़ उसके मकान पर गिर रहा है। मेरा घर भी..., यह कहकर वह तेजी से भीतर घुसा। प्रतिमा के पास पहुंचा, जो कूड़ेकरकट से ढंकी जमीन पर गिरी पड़ी थी। वह सही सलामत थी, सिर्फ अंगूठे का एक टुकड़ा ऊपर से गिरे एक पत्थर से टूटकर कुछ गज दूर जा पड़ा था।'

लोग चिल्लाकर बोले, 'देवता ने हमारी रक्षा के लिए खुद यह कर लिया है।'

अगली पूर्णिमा के दिन मंदिर में बड़ी धूमधाम से मूर्ति की प्रतिष्ठा की गई। सोम पर धन तथा उपहारों की वर्षा होने लगी। वह 95 वर्ष तक जिया लेकिन इसके बाद उसने छेनी और बसौली को हाथ नहीं लगाया।

-समाप्त

• कहानी/उमाशंकर जोशी

मड़ई

एकदम बचपन की बात है।

अक्षय तृतीया की सुबह, हाथ में शगुन की लाल सुर्ख कोपर लेकर मकनासी खांट हमारे यहां आये। बड़े भैया के पैर छूकर, 'घर के आम की है' कहते हुए उनके सामने कोपर रखी और ओसारे के खम्बे से टिककर बैठ गये। उनके साथ मेरी ही उम्र का उनका बेटा था। उसके सिर पर गमछे के दो फेरे लिपटे हुए थे और गमछे के दूसरे सिरे पर कुछ बांधकर गठरी कंधे पर डाली हुई थी।

'बेटा, गोवा, घर में जाकर काकी को खोलकर भुट्टे दे आ। गोवा अन्दर गया। गमछा एक ओर रखकर, सिर पर हाथ फेरकर मकनासी खांट बड़े भैया की तरफ थोड़ा खिसककर पलथी मारकर बैठे और उस ओर आश्चर्य से देखते रहे, जिधर बड़े भैया घुटनों पर हाथ की कोहनी टिकाये सिर पर हाथ रखकर बही देख रहे थे। कुछ देर बाद अच्छी बात सुनाने जा रहे हों, इस प्रकार बोले, 'मैंने कहा, कि...' पर बड़े भैया का ध्यान बंटा नहीं, अत: खंखार कर काफी जोर से बोले, 'मैंने कहा कि शामालभाई अब वापस पढ़ने चल जायेंगे, तो लाओ न दो भुट्टे लेता चलूं। आखिर भुट्टे थे कुएं पर के। फिर मेरी ओर घूमकर पूछा, 'इस साल तो आम अच्छे आये हैं, क्या आम खाने के लिए नहीं रुकोगे।' और मेरे उत्तर की प्रतीक्षा किये बिना बड़े भैया की ओर घूमकर कहने लगे, 'पढ़ाई वहां बच्चों को तनिक भी शान्ति से रहने देती है? पर भैया, बड़े होंगे तब बलिस्टर बनकर एक-एक बोल के हजार रुपये खड़े कर लेंगे।'

बड़े भैया ने कहा, 'पर अपने गांव के लोग कहां किसी लड़के को पढ़ने के लिए भेजते हैं।' और तुरन्त ही उन्होंने बही उठा ली। सिरे से बही को पकड़कर उसके पन्ने अंगुली के नीचे से फरफर-फरफर आने दिये, इच्छित पन्ने पर अंगुली दबाई तब पूरे वक्त मुझे लगता रहा था कि मकनासी की जिन्दगी के इतने दिन भैया ने चलाये लेकिन आज के दिन आकर वे अटक गये। उन दोनों के बीच कुछ हिसाब की बातें चलने लगीं। अन्दर से आकर गोवा ओसारे की सीढ़ियों पर बैठा था। मैं पास ही में था। मैंने पूछा, 'कौन-सी कक्षा में पढ़ते हो।' वह समझा नहीं या पता नहीं क्या, पर उसने जल्दी जवाब नहीं दिया कि तभी मकनासी जोर से बोल उठे-

'बड़े भैया आपका तो हम पर पहाड़ जैसा अहसान है। जिन्दगी भर भुला नहीं सकता। मैं गरीब अपनी शक्ति के अनुसार बदला चुकाऊंगा, यह निश्चित समझ लीजिए। इस साल मेरा यह गोवा आपके यहां हलवाही करेगा। फिर तो पूरा न? यों भी बीस रुपल्ली देकर आपको हलवाहा तो रखना ही पड़ता न? तो इतने में मेरे पन्द्रह उतार देना, अत: मेरे सिर से आपका कर्ज उतरा। और अगले जन्म में मुझे आपके यहां बैल बनकर जन्म न लेना पड़े। कैसी मुसीबत के समय आपने मुझे बारह रुपये दिये थे। भगवान आपको बादशाही बक्से।'

बड़े भैया ने फिर ना-नुकर की, 'यह दस बरस का बच्चा खेती को क्या पार लगा पायेगा?'

'अरे पिछले साल मैंने पूरे साल भर इसे अपने यहां खेती के काम में तैयार किया है। अपने शामलभाई से तो बड़ा लगता है।' और मेरी ओर घूमकर बोले, 'शामलभाई आपको कितने साल हुए।'

मैंने कहा, 'चौदहवां चल रहा है।' पर मैं बारह से भी छोटा लगता था।

'मेरे गोवा को तो आती होली पर पन्द्रहवां बैठेगा, पन्द्रहवां और फिर साल भर में पूरे आदमी की तनख्वाह लायेगा पच्चीस रुपये। और चार बरस में पांच बीसी की कमाई इकट्ठी हो जायेगी तो उसके लिए एक सुन्दर कन्या ले आऊंगा और वह अपनी घर-गृहस्थी शुरू करेगा, फिर हम निश्चिंत।'

मैंने गोवा की ओर देखा। मुझे वह ऐसा लगा कि मानों मेरी अपेक्षा दस साल बड़ा हो। तभी मकनासी ने मुझसे पूछा।

'कौन सी कक्षा में हो, भाई।'

'चौथी।'

बड़े भैया ने कहा, 'चौथी अंग्रेजी, हां।'

'और अपनी?' मकनासी ने आश्चर्यचकित होकर मुझसे पूछा।

'हमारी (गुजराती) सात पूरी करके फिर एक।' मैं समझाने लगा।

'देखा बेटा गोवा, ये तुझसे तो काफी छोटे हैं, पर इतने में ही आठवीं पढ़ चुके। अबके तेरी शाबाशी है। देखता हूं कैसे खेती पार लगाता है?'

मैंने पूछा, 'गोवा को कितना आता है?' गोवा तो मेरी ओर ही ताकता रहा। मकनासी बोले-

'बाप, हमारे यहां पढ़ाई कैसी? 'सब पढ़ने लगेंगे तो हल चलाने वाला भी कोई चाहिए न। हमारी और हमारे पुरखों की पड़े वगैर ही उम्र कट गई और इसी तरह, देखते ही देखते ये छोकरे भी घसीट लेंगे साठ-सत्तर बरस। धरती तो वही की वही है न।' बड़े भैया की तरफ देखकर फिर कहने लगे, 'ये तुम्हारे पिता तो पंचांग में से तिथि मुश्किल से निकाल पाते हैं, और तुम हिसाबी निकले और फिर भाई को बलिस्टर बनाओगे। किसी पूर्वजन्म के पुण्य वाले के भाग्य में ही विद्या होती है। हम तो काला अक्षर भैंस बराबर हैं पर कौन जानता है कि हमारी संतान भी होशियार निकल जाये और नाकेदार की साहबी नौकरी करने लगे, कुछ कहा भी तो नहीं जा सकता।'

-जारी

बड़े भैया ने कहा, 'पर अपने गांव के लोग कहां किसी लड़के को पढ़ने के लिए भेजते हैं।' और तुरन्त ही उन्होंने बही उठा ली। सिरे से बही को पकड़कर उसके पन्ने अंगुली के नीचे से फरफर-फरफर आने दिये, इच्छित पन्ने पर अंगुली दबाइ

तब पूरे वक्त मुझे लगता रहा था कि मकनासी की जिन्दगी के इतने दिन भैया ने चलाये लेकिन आज के दिन आकर वे अटक गये। उन दोनों के बीच कुछ हिसाब की बातें चलने लगीं...

• शायरी...

इस कशाकश में यहां उम्र-ए-रवां गुज़रे है
जैसे सहरा से कोई तिष्ना-दहां गुज़रे है
इस तरह तल्खी-ए-अय्याम से बढ़ती है ख़राश
जैसे दुश्नाम अज़ीज़ों पे गिरां गुज़रे हैं

◆ ◆ ◆

इस तरह दोस्त दग़ा दे के चले जाते हैं
जैसे हर नफ़अ के रस्ते से ज़ियां गुज़रे हैं
यूं भी पहुंचे हैं कुछ अफ़्साने हक़ीक़त के क़रीब
जैसे काबे से कोई पीर-ए-मुग़ां से गुज़रे है
हम गुनहगार जो उस सम्त निकल जाते हैं
एक आवाज़ सी आती है फ़लां गुज़रे है

-शोरिश काश्मीरी

◆ ◆ ◆

इश्क़ की दुनिया में इक हंगामा बरपा कर दिया
ऐ ख़याल-ए-दोस्त ये क्या हो गया क्या कर दिया
ज़र्रे ज़र्रे ने मिरा अफ़्साना सुन कर दाद दी
मैं ने वहशत में जहां को तेरा शैदा कर दिया

-एहसान दानिश

• अंधे को चराग़ दे रहा हूं...

किस शय का सुराग़ दे रहा हूं
अंधे को चराग़ दे रहा हूं
देते नहीं लोग दिल भी जिस को
मैं उस को दिमाग़ दे रहा हूं
बख़्शिष में मिली थीं चंद कलियां
तावान में बाग़ दे रहा हूं
तू ने दिए थे जिस्म को ज़ख़्म
मैं रूह को दाग़ दे रहा हूं
ज़ख़्मों से लहू टपक रहा है
क़ातिल को सुराग़ दे रहा हूं

-राशिद मुफ्ती